ISSN - 2250-1991 | IF : 5.215 | IC Value : 79.96

Indian Journal of Research PARIPEX

Original Research Paper | History

vkfn iqjk.k esa f'k{kk

Professor Dr. B.L. Sethi — M. Phil., Ph. D., D.Litt., Director, Trilok Institute of Higher Studies and Research Hotel Om Tower, Church Road M.I. Road, Jaipur-302001

Vikash Kumar — RESERCH SCOLAR, JJT UNIVERSITY, JHUNJHUNU

KEYWORDS

शिक्षा स्वरूप व उद्देश्य[1], शिक्षा समुदाय या व्यक्ति द्वारा परिचालित वह सामाजिक प्रक्रिया है, जो समाज को उसके द्वारा स्वीकृत मूल्यों और मान्यताओं की ओर अग्रसर करती है। सांस्कृतिक विरासत की उपलब्धि एवं जीवन में ज्ञान का अर्जन शिक्षा द्वारा ही होता है। जीवन समस्याओ की खोज, आध्यात्मिक तत्वों की छान–बीन एवं मानसिक क्षुधा की तृप्ति के साधन कला कौशल का परिज्ञान शिक्षा द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। आदिपुराण की दृष्टि में शिक्षा का विषय ऐहिक समस्याओं के साथ क्लेशो की अत्यान्तिक निवृत्ति का साधन तत्त्वज्ञान भी है। आचार और विचार का परिष्कार, उत्क्रान्ति एवं शाश्वत सुख की उपलब्धि का प्रधान साधन शिक्षा को माना जा सकता है। शिक्षा वैयक्तिक जीवन के परिष्कार का कार्य तो करती ही है, पर समाज को भी उन्नत बनाती है।[1]

आदिपुराण में शिक्षा का पर्याय विद्या, ज्ञान और श्रुत आया है। बताया गया है कि जब आदि तीर्थंकर के बालक बालिका व्यस्क हुए तो उन्होने उन्हें स्वयं ही शिक्षारम्भ कराया। इस सन्दर्भ में लिखा है कि रूप लावण्य और शील से समन्वित होने पर भी विद्या से विभूषित होना परम आवश्यक है। इस लोक में विद्वान् व्यक्ति ही सम्मान को प्राप्त होता है। विद्या ही मनुष्य को यश देने वाली है, विद्या ही आत्मकल्याणक करने वाली है और अच्छी तरह से अभ्यास की गयी विद्या ही समस्त मनोरथों को पूर्ण करती है।

कन्या हो या पुत्र, दोनों को समानरूप से विद्यार्जन करना चाहिए। कल्पलता के समान समस्त सुखों, ऐश्वर्यो और वैभवों की प्राप्ति विद्या द्वारा ही होती है। अतएव बाल्यकाल से विद्या प्राप्ति के लिए निरन्तर सचेष्ट रहना चाहिए। आदिपुराण में जीवनोत्थान और जीवन को सुसंकृत करने पर बल दिया गया है।

शिक्षा का लक्ष्य आन्तरिक दैवी शक्तियों की अभिव्यक्ति करना है, अन्तर्निहित श्रेष्ठतम उदात्त मानवीय गुणों का विकास करना है तथा शरीर, मन और आत्मा को सबल बनाना है। त्याग, संयम, आचार–विचार और कर्तव्यनिष्ठा का बोध भी शिक्षा द्वारा ही प्राप्त होता है। सतत् स्वाध्याय से ही व्यक्ति की अन्तर्निहित शक्तियाँ प्रादुर्भूत हो जाती है, शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक शुचिता, बौद्धिक प्रखरता, आध्यात्मिक दृष्टि, नैतिकबल, कर्मठता एवं सहिष्णुता की प्राप्ति शिक्षा तथा स्वाध्याय द्वारा ही सम्भव है। तथ्य और आंकड़े वाली शिक्षा निस्सार है।[2]

आदिपुराण में आदितीर्थंकर ऋषभदेव ने अपनी कन्याओं और कुमारो को जो शिक्षा दी है, उससे शिक्षा के निम्न उद्देश्यों पर प्रकाश पड़ता है:–

(1) आत्मोत्थान के लिए प्रयत्नशीलता ।
(2)जगत् और जीवन के सम्बन्धों का परिज्ञान ।
(3) आचार, दर्शन और विज्ञान के त्रिभुज की उपलब्धि ।
(4) प्रसुप्त शक्तियों का उद्‌बोधन ।
(5) सहिष्णुता की प्राप्ति ।
(6) कलात्मक जीवन–यापन करने की प्रेरणा की प्राप्ति ।
(7) अनेकान्तात्मक दृष्टिकोण द्वारा भावात्मक अहिंसा की प्राप्ति ।
(8) व्यक्तित्व के विकास के लिए समुचित अवसरों की प्राप्ति ।
(9) कर्तव्य पालन के प्रति जागरूकता का बोध ।
(10) शारीरिक, मानसिक और आत्मिक शक्तियों का उन्नयन ।
(11) विवेक दृष्टि की प्राप्ति ।

f'k{kk i)fr

¼1½ mPpkj.k dh Li"Vrk :– शिक्षक वर्णों का उच्चारण उनके स्थान और प्रयत्न के अनुसार शिक्षा सिखा पाता है। शिक्षाग्रन्थों में जिस उच्चारण विधि का निरूपण आता है, उस विधि के अनुसार वर्णों का उच्चारण शिष्यों को सिखाया जाता है।

¼2½ ys[kudyk dk vH;kl %& पाठ पद्धति का दूसरा तत्व लिखना सीखने का अभ्यास है। ब्राह्मी और सुन्दरी को लिखने की कला सिखलायी गयी थी।

¼3½ rdkZRed l[;k i.kkyh %& वस्तुओं के गिनने के रूप में अंकविद्या का प्रारम्भ हुआ। अंक का महत्त्व हमें तभी मालूम होता है, जब हम कई समूहों में एक अंक संख्या को पाते हैं। तब हम वस्तुओं का बार बार नाम न लेकर उनकी संख्या को कहते है। इन संख्याओ का विकास जीवादि पदार्थो के ज्ञान के लिए हुआ है। अतः पाठ शैली के तीसरे तत्व द्वारा परिकर्माष्टक योग, गुणा, घटाव, भाग, वर्ग, वर्गमूल, घन, एवं धनमूल इन आठ क्रियाओं का परिज्ञान किया गया है।[3]

(2) vkfn iqjk.k esa i'uksRrj i)fr dk iz;ksx श्रेणिक प्रश्नकर्ता शिष्या के प्रतीक और गौतम गणधर उत्तर देने वाले गुरू के रूप में पाया जाता है। देवियाँ विभिन्न प्रकार के प्रश्न माता से पूछती है और माता उत्तर देकर उनके ज्ञान का संवर्धन करती है। समस्यापूर्तियाँ और पहेलियाँ भी इसी विधि में सम्मिलित हो जाती है। समस्यापूर्ति आदि का लक्ष्य बुद्धि को तीव्र बनाना तथा अनेक विषयों का ज्ञान प्राप्त करना है।

इस प्रकार शिष्य गुरू से प्रश्न करता है और गुरू चमत्कारपूर्ण उत्तर देकर शिष्य को सन्तुष्ट करते है। इस प्रणाली द्वारा विषयों को हृदयंगम करने में विशेष सुविधा होती है। गूढ़ और दुरूह विषय भी सरलता पूर्वक समझ में आते हैं।

प्रश्नोत्तर दोनों ही ओर से किये जाते हैं। शिष्य भी प्रश्न करता है और गुरू भी शिष्य से। गुरू प्रश्नों का तर्कपूर्ण उत्तर देकर शास्त्रीय ज्ञान का संवर्द्धन करता है। शिक्षाशास्त्र की दृष्टि से यह प्रौढ़ शैली है, इसका प्रयोग व्यस्क और प्रतिभाशाली छात्रों के लिए ही किया जाता है।

(3) 'kkL=kFkZ iz.kkyh f'k{kk i)fr की एक प्रमुख विधि है। इस विधि में पूर्व और उत्तर पक्ष की स्थापनापूर्वक विषयों की जानकारी प्राप्त की जाती है। एक ही तथ्य की उपलब्धि विभिन्न प्रकार के तर्कों, विकल्पों और बौद्धिक प्रयोगों द्वारा की जाती हैं। प्रमाण, नय, निक्षेप द्वारा वस्तु स्वरूप का प्रतिपादन शास्त्रार्थ प्रणाली पर किया गया है।

¼4½ mins'k fof/k%& इसका प्रमुख रूप उपदेश द्वारा शिक्षा देना है। आदिपुराण में आदितीर्थंकर का धर्मोपदेश इसी विधि के अन्तर्गत लिया जा सकता है। स्वाध्याय के पाँच भेदों में उपदेश का कथन आया है। इसका वास्तविक रहस्य गुरूद्वारा भाषण के रूप में विषय का प्रतिपादन करना है। इस विधि का उपयोग उसी समय किया जाता है, जब शिष्य प्रौढ़ हो जाता है और उसका मस्तिष्क विकसित हो प्रमुख विषयों को ग्रहण करने की क्षमता प्राप्त कर लेता हैं।

¼5½ miØe ;k mik)kr fof/k :– वर्णनीय विषय को शिष्य के मस्तिष्क में पूर्णतया प्रविष्ट कर देना उपक्रम पाठ विधि है, इसी का दूसरा नाम उपोद्धात भी है। आनुपूर्वी, नाम, प्रमाण, अभिधेय और अर्थाधिकार ये उपक्रम के पाँच भेद हैं। आदिक्रम, मध्यक्रम और अन्त्यक्रम द्वारा वस्तुओं का प्रतिपादन करना अनुपूर्वी है। क्रमपूर्वक विषयों का परिज्ञान कराना अनुपूर्वी में परिगणित है। जो गुरू या पाठक इस विधि को अपनाता है, वह पाठय विषय का किसी क्रम विशेष के अनुसार विवेचन या व्याख्यान करता है। अनुपूर्वी से विषय को हृदयंगम करने में सहायता प्राप्त होती है।[4]

(6) iapkxfof/k:– इसके स्वाध्याय सम्बन्धी पाँच अंग है। इन पाँचों अंगो द्वारा विषय के मर्म को समझा जाता है।

पाठक सर्वप्रथम वाचना का प्रयोग करता है। वाचना का अर्थ पढ़ना है। उसके बाद पृच्छना–पूछकर विषय के मर्म को प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। अधिगत विषय को बार–बार अभ्यास द्वारा स्मरण रखने का प्रयास अनुप्रेक्षा है। मनन और चिन्तन किये गये विषय की धारणा बनाये रखने के लिए घाख घोख कर याद करना घोष स्वाध्याय है। उपदेश के रूप में विषय को समझना या समझाना उपदेश स्वाध्याय है। पचांगविधि द्वारा विषय की व्याख्या एवं उसे समझने का पूर्ण प्रयास किया जाता है। जिस प्रकार समुद्र की गहराई शनैः शनैः बढ़ती जाती है, उसी प्रकार पचांगविधिःद्वारा शिक्षा का उत्तरोत्तर विस्तार होता जाता है।

lanHkZ lwph

1. पण्डित कैलाश चन्द शास्त्री ''जैन धर्म'' पृ 228–230
2. डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री –''आदिपुराण में प्रतिपादित भारत'' पृष्ठ – 295–300
3. महापुराण 8/22, डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री – ''आदिपुराण में प्रतिपादित भारत'' पृष्ठ –307
4. महापुराण 19/53–57, डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री– ''आदिपुराण में प्रतिपादित भारत'' पृष्ठ–293